International Journal of Scientific Research in Engineering and Management (IJSREM)
Volume: 05 Issue:02 | Feb-2021 SJIF Rating: 6.714 ISSN: 2582-3930

तिलक पर गीता का प्रभाव और उनकी कालजयी रचना 'गीता रहस्य'

डॉ.राधेश्याम शर्मा

(Principal)

विषय : राजनीतिक विज्ञान

बानसूर पी.जी. कॉलेज बानसूर (अलवर) राज.

तिलक के दर्शन एवं विचार पर जितना प्रभाव गीता का था उतना किसी अन्य ग्रंथ का नहीं था I इसलिए गीता का गहरा अध्ययन करके, उन्होंने मांडले के कारागार में प्रसिद्ध "गीता रहस्य" की रचना की थी I यह वृहत और चिरस्थाई ग्रंथ गीता का विद्वता पूर्ण भाष्य ही नहीं है, अपितु इसने आधुनिक भारतीय राष्ट्रवाद की अधिकारिक की पाठ्यपुस्तक का भी काम किया है I उसने देश के नवयुवकों को निष्काम कर्म का अनुप्रेरित संदेश दिया I तिलक बचपन से ही गीता से प्रभावित थे और 1892 में ही विवेकानंद के साथ वार्तालाप करते हुए तिलक ने अपना यह मत व्यक्त किया था कि गीता निष्काम कर्म की शिक्षा देती है I[1] उसके बाद उन्होंने गीता का गहन अध्ययन किया और जब इसके लिए उन्होंने मांडले जेल का एकांतवास एवं समय मिला तो उन्होंने 2 नवंबर, 1910 से 30 मार्च 1911 तक केवल 5 महीने में ही गीता पर प्रथम पांडुलिपि तैयार की और उसके बारे में "मराठा" में जो पत्र प्रकाशित हुआ, उसमें उन्होंने लिखा कि गीता के संबंध में जिसे मैं गीता रहस्य कहता हूं, उसे मैंने समाप्त कर लिया है I यह स्वतंत्र और मौलिक पुस्तक है जो गीता के उद्देश्य की छानबीन करती है और इसमें यह दिखाया गया है कि उसमें हमारा धार्मिक दर्शन आचार शास्त्रीय समस्या के समाधान में किस तरह प्रयुक्त किया गया है, क्योंकि गीता के विषय में मेरा विचार यह है कि यह आचार शास्त्र की पुस्तक है I मैंने सर्वत्र गीता के दर्शन की पाश्चात्य और आचार शास्त्रीय दर्शन से तुलना की है और मैंने पाया है कि हमारा दर्शन किसी पाश्चात्य दर्शन से किसी प्रकार भी कम से कम निम्न कोटि का नहीं है I तिलक के अनुसार गीता ब्रह्म साक्षात्कार हो जाने पर भी कर्म करने की आवश्यकता का प्रतिपादन करती है ईश्वर की प्राप्ति होने से पूर्व और बाद में भी कर्म करना अनिवार्य हैI मैं जिस निष्कर्ष पर पहुंचता हूं वह यह है की गीता ज्ञान या भक्ति के द्वारा ईश्वर से साक्षात्कार कर लेने से भी कर्ता को कर्म करने की शिक्षा देती है I नैतिक और तांत्रिक विकास के उसी मार्ग पर संसार को चलते रहने के लिए कर्म अवश्य करना चाहिए, जिसका संसार के द्वारा अनुसरण ईश्वर को अभीष्ट है I कर्म कर्ता के बंधन के कारण नहीं बने, इसलिए इसे अपने उद्देश्य की सहायता करने के लक्ष्य से और होने वाले फल की आसक्ति से रहित होकर करना चाहिए I मेरे विचार से यही गीता की शिक्षा है I हां, उसमें ज्ञान योग है, उसमें भक्ति योग है, कौन कहता है नहीं I परंतु दोनों गीता में उपदेश, कर्मयोग के सहायक हैं I यदि हतोत्साहित अर्जुन को युद्ध करने के लिए प्रस्तुत करने के लिए, कर्म करने के लिए, गीता का उपदेश दिया गया, तो यह कैसे कहा जा सकता है कि उस महान ग्रंथ की सर्वोच्च शिक्षा केवल ज्ञान या भक्ति है ? वास्तव में गीता में इन सभी योगो का समन्वय है , और जिस प्रकार वायु केवल हाइड्रोजन,ऑक्सीजन या अन्य कोई गैस नहीं है, बल्कि एक विशेष अनुपात में सभी का संयुक्त रूप है, उसी प्रकार गीता में यह सभी योग एक में संयुक्त हैं I

मैं जब यह कहता हूं की ज्ञान और भक्ति में पूर्णता प्राप्त कर लेने पर भी गीता कर्म करने की शिक्षा देती है, तो मैं प्राय: सभी टीकाकारों से अपना मतभेद व्यक्त करता हूं I ईश्वर, मनुष्य और संसार में एक मौलिक एकता है I संसार का अस्तित्व है, क्योंकि ईश्वर ने इसे वैसा होने की इच्छा की है I उन्हीं के संकल्प से यह टिका हुआ है I मनुष्य ईश्वर से ऐक्य प्राप्त करना चाहता है और जब यह ऐक्य प्राप्त हो जाता है तो व्यक्ति का संकल्प शक्तिशाली विश्व संकल्प में मिल जाता है I जब यह स्थिति प्राप्त हो जाती है तो क्या व्यक्ति यह कहेगा कि " मैं कोई काम नहीं करूंगा और संसार की सहायता नहीं करूंगा I "

वह संसार जिसका अस्तित्व इसलिए है कि उसे संकल्प ने उसे वैसा होने की इच्छा की है, जिसके साथ उसने ऐक्य स्थापित करना चाहा I यह तर्कसंगत नहीं है I मैं ऐसा नहीं कहता, गीता ऐसा कहती है I एवं श्री कृष्ण कहते हैं कि तीनों लोकों में ऐसी कोई वस्तु नहीं है, जिसे प्राप्त करने की आवश्यकता है, फिर भी वे काम करते हैं I क्योंकि यदि वे नहीं करे तो संसार नष्ट हो जाएगा I यदि मनुष्य ईश्वर के साथ एकता चाहे तो उसे निश्चित रूप से संसार के हित के साथ भी एकता स्थापित करनी होगी और उसके लिए काम भी करना होगा I यदि वह ऐसा नहीं करता तो एकता पूर्ण नहीं है क्योंकि तीन में से दो (मनुष्य और ईश्वर) के बीच एकता है और तीसरा (संसार) छूट जाता है I इस प्रकार मैंने अपने लिए इस प्रश्न का समाधान निकाला है और मैं यह जानता हूं कि संसार की सेवा करना और इस प्रकार ईश्वर के संकल्प की सेवा करना मोक्ष का सर्वश्रेष्ठ मार्ग है और इस मार्ग का अनुसरण संसार में रहने से हो सकता है I[2] यह अद्वैतवाद के तत्व दर्शन की शिक्षा देती है I अनंत, चेतन, अमृत, सर्वाधार, पुरुषोत्तम एवं सर्वशक्तिमान तत्व में इसे पूर्ण आस्था है I यह सर्वोच्च आध्यात्मिक चेतना की प्राप्ति का मार्ग बताती है, परंतु साथ ही साथ यह संसार में कर्म के महत्व का खंडन भी करती है I निष्काम कर्म योग का इसका दर्शन,दया,भक्ति और कर्म में समन्वय स्थापित करता है I गीता हमें प्रेरणात्मक और उद्दात स्वर में वैदिक और उपनिषद का सारांश प्रदान करती है I गीता इस सर्वोच्च वेदांती शिक्षा को स्वीकार करती है कि जागतिक विराट परमार्थिक आत्मा और मानसिक या व्यक्तिगत विकास के बीच तादात्म्य के ज्ञान के बिना सर्वग्रांथिकप्रणशिखा की मुक्ति नहीं हो सकती, परंतु यह ज्ञान के अन्वेषक और ज्ञान प्राप्त करने वाले पुरुष दोनों के लिए कर्म की आवश्यकता की शिक्षा देती है I इस सिद्धांत के आधार पर यह बताना चाहती है कि क्यों दैवी संवत वाले मनुष्य को युद्ध में भाग लेने जैसे भयंकर कार्य करने चाहिए I परम अध्यात्मिक अमृत, अच्युत्य सर्वज्ञ, अक्सर सत्ता की वास्तविकता की शिक्षा देना और उस आधार पर कर्म की मौलिक समस्याओं का समाधान करना गीता का मुख्य उद्देश्य है I[3] यह आचार शास्त्र की पुस्तक है, जिसका आधार आध्यात्मिक तत्वमीमांसा है I

गीता के काल की गणना की दृष्टि से तिलक ने इस शालवाह शक प्राय: 500 वर्ष पहले इसका ऐसा ही अस्तित्व था I वर्तमान गीता जिसमें 700 श्लोक है, वर्तमान महाभारत का एक अंश है और दोनों की रचना एक ही व्यक्ति के द्वारा हुई है और गीता महाभारत में बाद में नहीं जोड़ी गई I गीता भारतीय दर्शन एवं आध्यात्मिक चिंतन के क्षेत्र में एक महत्वपूर्ण कृति है I इसलिए इस पर भारत के महान आचार्य ने भी टीका लिखी थी I तिलक के अनुसार ये आचार्य गीता को अपनी विशिष्ट वेदांती विचारधारा के धर्म दार्शनिक सिद्धांतों का समर्थन करने के लिए बौद्धिक साधन बनाना चाहते हैं I तिलक के मतानुसार गीता का अर्थ उस विशिष्ट ऐतिहासिक स्थिति से पृथक करके नहीं समझा जाना चाहिए, जिसने इसका उपदेश दिया गया था I गीता रहस्य के प्रथम अध्याय में कर्म योग की शिक्षा है, क्योंकि अत्यंत सूक्ष्म तत्वमीमांसीय विवेचना के बीच कृष्ण बार-बार अर्जुन को कर्म करने के लिए और युद्ध करने के लिए कहते हैं I द्वितीय अध्याय में भारतीय और पाश्चात्य साहित्य से गंभीर द्वंदवाहिनी स्थितियों का उदाहरण प्रस्तुत करता है | जब कभी मनुष्य का सामना ऐसी स्थिति में हो जाता है,जब उसके लिए किसी एक विशेष कार्य को स्वीकार करना कठिन हो जाता है I क्या अर्जुन को अपने आदरणीय गुरुजनों और प्रिय संबंधियों का वध करना चाहिए और इस प्रकार क्षत्रिय गृहस्थ का परंपरा प्राप्त कर्तव्य पालन करना चाहिए या उनको संसार का त्याग करके यायावर भिक्षुक का मार्ग स्वीकार करना चाहिए? क्या सत्य और अहिंसा के सिद्धांत और कसौटियों को सर्वथा अनुपेक्षणीय मानना चाहिए या उनमें भी कुछ अपवाद है? यदि सत्य निरपेक्ष है तो कृष्ण, जिन्हें ईश्वर का अवतार माना जाता है, युधिष्ठिर को युद्ध क्षेत्र में झूठ बोलने की प्रेरणा क्यों देते हैं? इसलिए यह स्पष्ट है कि वैकल्पिक और कभी-कभी विपरीत कर्मों में तर्कसंगत चुनाव की नैतिक समस्या बहुत कठिन है I आचार शास्त्र की समस्या नैतिक चेतना वाले किसी मनुष्य के जीवन में ऐसे विरोधी विकल्पों के निरंतर उपस्थित होने पर अपना आधार और औचित्य प्राप्त करती हैं I इसलिए यह जानना आवश्यक है कि कर्म, अकर्म, और विकर्म क्या है I मीमांसा के अनुसार चार विशिष्ट प्रकार के कर्मों में, नित्यक्रम, नैमित्तिक कर्म, काम्य कर्म, निषिद्ध कर्म बताते हैं I गीता में इससे भिन्न जैसा कि तिलक समझते हैं, अकर्म का अर्थ सात्विक कर्म है I कर्म राजसिक कर्म है और विकर्म उन कर्मों को कहते हैं, जो या तो किए जाते हैं या भ्रम की भावना के कारण त्याग दिया जाते हैं I[4]

तिलक के अनुसार गीता में प्रयुक्त होने वाला योग शब्द कर्म योग का बोधक है, यदि वह पहले से ही विशिष्ट अर्थ में प्रयुक्त में हुआ हो I तिलक द्वारा व्याख्यात कर्मयोग का अर्थ वह कर्म है जो उस व्यवसायिकात्मक बुद्धि की प्राप्ति की प्रक्रिया में और उसकी प्राप्ति के बाद किया जाता है, जो वस्तुओं को संतुलन, समभाव, और शांति के साथ देखती है I गीता का कर्मयोग, मोक्ष प्राप्ति का और संसार में निष्काम तटस्थ वृत्ति से काम करने का भी प्राचीन मार्ग हैं I गीता निश्चय ही संन्यास मार्ग की निंदा नहीं करती I इसका केवल यही कहना है कि कर्मयोग सन्यास से श्रेष्ठ है I कर्मयोग का मार्ग संसार के दृष्टिकोण से सन्यास मार्ग से अधिक अच्छा है I

गीता रहस्य के चतुर्थ एवं पंचम अध्याय में तिलक दुख और सुख की प्रकृति का विश्लेषण करते हैं I वह सुखवादियों की अहमवादी परिकल्पना का खंडन करते हैं और यह स्वीकार करते हैं कि मनुष्य में आत्मसंतोष की अहमवादी भावना जितनी है, उतनी ही परोपकार की भावना भी मनुष्य के स्वभाव में है I तिलक कुछ-कुछ टी. एच. ग्रीन की " आचारशास्त्र की प्रस्तावना" के ढंग पर भगवत गीता को आध्यात्मिक आचारशास्त्र की पुस्तक मानते हैं I

गीता रहस्य के छठे अध्याय में आचार शास्त्र की प्रतिभविचारधारा का विश्लेषण करके उसकी आलोचना की गई है I ईसाई लेखकों द्वारा इसका समर्थन किया गया है I तिलक के अनुसार यह विचारधारा अपर्याप्त हैं, क्योंकि मन और बुद्धि के अतिरिक्त चेतना और नैतिक अंतर्ज्ञान जैसी पृथक और स्वतंत्र इकाई के अस्तित्व को स्वीकार करने के लिए कोई आधार नहीं है I[5] तिलक की व्याख्या के अनुसार गीता में और कांट के अनुसार भी आध्यात्मिक सर्वरक्षावाद के दृष्टिकोण से कर्म करने पर सर्वाधिक जोर देना चाहिए I गीता रहस्य के सप्तम अष्टम और नवम अध्याय में तिलक गीता के विश्वोत्पतिवाद और तत्वमीमांसा का विश्लेषण करते हैं I शंकर के समान तिलक भी यही स्वीकार करते हैं कि गीता अद्वैतवाद की शिक्षा देती है I गीता की व्याख्या के विषय में शंकर और तिलक के बीच तत्वमीमांसा मतभेद नहीं है, अपितु आचारशास्त्रीय है I शंकर और तिलक दोनों यह स्वीकार करते हैं की गीता एक परमार्थिक, विराट, और आध्यात्मिक आत्मा की आधारभूत और चरम सत्ता की शिक्षा देती है जो विज्ञानधन, परमप्रज्ञा धन और आनंद स्वरूप है I अद्वैतवादी वेदांतवादियों के समान तिलक यह स्वीकार करते हैं कि संसार चरम सत्ता(ब्रह्मा) का प्रत्यक्ष दृश्य मान विवृतात्मक स्वरूप है और उस सत्ता का कारणात्मक विकास या रूपांतरण नहीं है I वे परंपरागत अद्वैतवादी वेदांत के विवृत सिद्धांत को स्वीकार करते हैं I वेदांत के अनुसार सच्चिदानंद अर्थात निर्गुण ब्रह्म तत्वमीमांसीय दृष्टि और गंभीर चिंतनआत्मक दृष्टि से सर्वोच्च सत्ता अर्थात परंपर ब्रह्म है I परंतु धार्मिक उपासना के उद्देश्य से निर्गुण ब्रह्म को सगुण ईश्वर समझा जाता है I[6]

गीता रहस्य के दसवें अध्याय में आत्मा की स्वतंत्रता की बात कही गई है I तिलक के अनुसार मनुष्य को अपना काम करना चाहिए, और ब्रह्म के साथ समानता और तादाम्य की दृष्टि प्राप्त करने की चेष्टा करनी चाहिए I गीता मानवता के सामने स्वयं श्री कृष्ण का उदाहरण प्रस्तुत करती I उन्हें अपना व्यक्तिगत कुछ भी लाभ प्राप्त नहीं है परंतु वे सर्वभूताहित की प्राप्ति के लिए निरंतर काम करते हैं I

गीता रहस्य के एकादश अध्याय में सन्यास और कर्मयोग के आचारशास्त्र का विवेचन किया गया है I इसमें यह भी शिक्षा दी गई है, कि परम आध्यात्मिक ज्ञान पर आधारित अनासक्त कर्म ही मोक्ष प्रदान करता है I इस ग्रंथ के द्वादश अध्याय में तिलक सिद्धावस्था की प्राप्ति के बाद कर्म के तरीकों और प्रक्रियाओं का विवेचन करते हैं I उनके अनुसार सिद्ध पुरुष को भी इस अपूर्ण संसार में रहना पड़ता है जहां पर सब प्रकार के दुष्ट और कामी पुरुष रहते हैं I यदि सिद्ध पुरुष आध्यात्मिक और नैतिक कर्तव्यों के समाज में रहे तो वह नैतिक नियमों को कठोरता पूर्वक स्वीकार कर सकता है I परंतु क्योंकि यह आशंका है कि बेईमान और दुष्ट लोग इसके अस्तित्व को खतरा पहुंचा सकते हैं I इसलिए उसे अहिंसा और क्षमा जैसे गुणों की निरपेक्षता को स्वीकार नहीं करना चाहिए I गीता के अनुसार आध्यात्मिक अनासक्ति की भावना का अभ्यास अनिवार्य वस्तु है, और केवल हिंसक या अहिंसक बाह्यकर्म मुख्य और अनिवार्य विषय नहीं है I यदि बुद्धिमान व्यक्ति दुष्ट से संघर्ष करता है तो इसमें कोई नैतिक दोष नहीं है I ऐसा संघर्ष यदि ईश्वरापर्ण बुद्धि से किया जाए तो गलत नहीं है I गीता मानसिक हिंसा की शिक्षा देती है, शारीरिक संघर्ष के अभाव की नहीं I आत्मरक्षण का स्वभाविक आधार सभी स्थितियों में सुरक्षित है, परंतु ऐसे अवसर आ सकते हैं, जब बुद्धिमान पुरुष देश या धर्म के लिए अपना बलिदान करना उचित समझे I "[7]

भक्ति मार्ग का वर्णन गीता रहस्य के त्रयोदश अध्याय में मिलता है I भक्ति आध्यात्म का एक भाग है I साधन के रूप में भक्ति का मार्ग भी ईश्वर की प्राप्ति और समभाव की उपलब्धि करा देता है I परंतु भक्ति ज्ञान का साधन है, यह अंतिम लक्ष्य या निष्ठा नहीं है I गीता में भक्ति पर जोर देना उपनिषदों की शिक्षा का प्रजातांत्रिकरण है, क्योंकि सब लोग भक्ति का मार्ग अपना सकते हैं, परंतु सभी सूक्ष्म तत्वमीमांसा को नहीं समझ सकते I यह विचार कि, भक्ति द्वारा ब्रह्म से तादाम्य प्राप्त किया जा सकता है I देशवासियों के अध्यात्मिक पुनर्जागरण के लिए मार्ग प्रशस्त करता है I गीता रहस्य का चतुर्दश अध्याय गीता के 18 अध्यायो के तर्क शास्त्रों की व्याख्या करता है, और यह दिखाता है कि 1 अध्याय का दूसरे अध्याय में तर्कसंगत संबंध है I 15 वे अध्याय में अंतिम उपसंहार है I[8] इसमें गीता धर्म के बारे में तिलक लिखते हैं कि वह सर्वोपरि निर्भर एवं व्यापक है I वह सम अर्थात वर्ण, जाति या देश या किसी अन्य भेदों के झगड़े

में नहीं पड़ता, किंतु सब लोगों को एक ही मापतौल से सद्गति देता है I यह अन्य धर्मों के प्रति यथोचित सहिष्णुता दिखाता है I वह ज्ञान, भक्ति और अमृत फल है I[9] इस प्रकार तिलक का 15 अध्याय में बांटकर गीता पर लिखा गया एक युग परिवर्तनकारी ग्रंथ माना गया है I कर्म योग की शिक्षा ने देश में कर्मवाद की एक शक्तिशाली धारा प्रवाहित कर दी है I

इस प्रकार गीता रहस्य तिलक द्वारा रचित एक महान भाष्य है I यह महाभारत के समय के सक्रिय कर्मवाद की महान भावना का ग्रहण करती है I तिलक स्वयं कृष्ण के जीवन से शिक्षा लेने के लिए लोगों से बार-बार कहते हैं क्या कृष्ण गृहस्थ जीवन का त्याग करते हैं? कृष्ण तब भी कार्यरत रहते हैं, जब तीनों लोकों में उनके लिए कोई अप्राप्य स्वार्थ कार्य शेष नहीं है I इसलिए स्वयं कृष्ण के द्वारा कर्मयोग को दिव्य समर्थन प्राप्त हुआ है I तिलक का तर्क मौलिक है I वे लोगों को कहते हैं कि गीता का शाब्दिक विवेचन करने के बदले वे गीता की शिक्षा देने वाले महापुरुष के जीवन संदेश पर ध्यान दें I इसमें जनक, राम, भीष्म, और अन्य लोगों के द्वारा स्वीकृत प्रवृत्तियों निष्काम कर्म की प्राचीन शिक्षा की इस पुस्तक में एक बार पुनः सफलतापूर्वक व्याख्या की गई है I तिलक के अनुसार गीता आध्यात्मिक आचारशास्त्र की पुस्तक है जो उस मनुष्य के लिए लोक संग्रहार्थ कर्म की आवश्यकता पर बल देती है, जिसे दिव्य अनुभूति के द्वारा शांतचित्ता प्राप्त हो गई है I

इस प्रकार गीता पर तिलक द्वारा लिखित भाष्य गीता रहस्य, विशाल और चिरस्थाई पुस्तक है I मराठी साहित्य में एक युगपरिवर्तनकारी रचना है I इसमें शैली की सरलता के साथ मीमांसात्मक और पांडित्व का समन्वय हैI

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. विश्वनाथ प्रसाद वर्मा, दि रिलेशन ऑफ़ तिलक एंड विवेकानंद , दि वेदांत केसरी, मद्रास, खंड 15,संख्या 7, नवंबर 1938, पृष्ठ 291-292

2. डॉ. वी.पी. वर्मा, लोकमान्य तिलक जीवन और दर्शन, लक्ष्मीनारायण अग्रवाल प्रकाशक, आगरा, पृष्ठ,492

3. उपर्युक्त पृष्ठ 506

4.उपर्युक्त पृष्ठ 675

5. तिलक, गीता रहस्य, पूना (हिंदी संस्करण) 1950

6. एस.वी.बापट, रेमिनिसेन्स एन्ड ऐनेक डॉट्स ऑफ़ लोक मान्य तिलक, खण्ड -2, पृष्ठ 498

7. उपर्युक्त, पृष्ठ 399

8. उपर्युक्त, पृष्ठ 503

9.उपर्युक्त, पृष्ठ 508

10. तिलक, गीता रहस्य, पूना (हिन्दी संस्करण), 1950 पृष्ठ 7

11. उपर्युक्त, पृष्ठ 6